International Journal of Advances in Engineering and Management (IJAEM)
Volume 5, Issue 2 Feb. 2023, pp: 451-454 www.ijaem.net ISSN: 2395-5252

औपनिवेशिक काल में नगरिय स्थापत्य कला

Anshul Rani D/o Rajesh Kumar
Dept. of History
Ward No. 12, V.P.O. Narnaund, (Hisar) Hr.

Date of Submission: 03-02-2023 Date of Acceptance: 17-02-2023

अठारहवीं शताब्दी में पुराने नगर पतनोन्मुख हुए और नए नगरों का विकास होने लगा। मुगल सत्ता के क्रमिक शरण के कारण ही उसके शासन से सम्बद्ध नगरों का अवसान हो गया। मुगल राजधानियों दिल्ली और आगरा ने अपना राजनीतिक प्रभुत्व खो दिया। नयी क्षेत्रीय ताकतों का विकास क्षेत्रीय राजधानियों लखनऊ? हैदराबाद सेरिंगपट्म पूना आज का फणेद्ध नागपुर बड़ौदा तथा तंजौर आज का तंजावुर के बढ़ते महत्व में परिलक्षित हुआ। व्यापारी प्रशासक शिल्पकार तथा अन्य लोग पुराने मुगल केन्द्रों से इन नयी राजधानियों की ओर काम तथा संरक्षण की तलाश में आने लगे। नए राज्यों के बीच निरंतर लड़ाइयों का परिणाम यह था कि भाड़े के सैनिकों को भी यहाँ तैयार रोजगार मिलता था। कुछ स्थानीय विशिष्ट लोगों तथा उत्तर भारत में मुगल साम्राज्य से सम्बद्ध अधिकारियों ने भी इस अवसर का उपयोग कस्बे और गंज जैसी नयी शहरी बस्तियों को बसाने में किया।

लोग ग्रामीण अंचलों में खेती जंगलों में संग्रहण या पशुपालन के द्वारा जीवन निर्वाह करते थे। इसके विपरीत कस्बों में शिल्पकार व्यापारी प्रशासक तथा शासक रहते थे। कस्बों का ग्रामीण जनता पर प्रभुत्व होता था और वे खेती से प्राप्त करों और अधिशेष के आधार पर फलते–फूलते थे। अकसर कस्बों और शहरों की किलेबन्दी की जाती थी जो ग्रामीण क्षेत्रों से इनकी पृथकता को चिन्हित करती थी। फिर भी कस्बों और गाँवों के बीच की पृथकता अनिश्चित होती थी। किसान तीर्थ करने के लिए लम्बी दूरियाँ तय करते थे और कस्बों से होकर गुजरते थे वे अकाल के समय कस्बों में जमा भी हो जाते थे। इसके अतिरिक्त लोगों और माल का कस्बों से गाँवों की ओर विपरीत गमन भी था। जब कस्बों पर आक्रमण होते थे तो लोग अकसर ग्रामीण क्षेत्रों में शरण लेते थे। व्यापारी और फैरीवाले कस्बों से माल गाँव ले जाकर बेचते थे, जिसके द्वारा बाजारों का फैलाव और उपभोग की नयी शैलियों का सृजन होता था।

नगरों के भीतर उद्यान मस्जिदें मन्दिर मकबरे महाविद्यालय बाजार तथा कारवाँ सराय स्थिति होती थीं। नगर का ध्यान महल और मुख्य मस्जिद की ओर होता था। दक्षिण भारत के नगरों जैसे मदुरई और काँचीपुरम् में मुख्य केन्द्र मन्दिर होता था। ये नगर महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र भी थे। धार्मिक त्योहार अकसर मेलों के साथ होते थे जिससे तीर्थ और व्यापार जुड़ जाते थे। सामान्यतः शासक धार्मिक संस्थानों का सबसे ऊँचा प्राधिकारी और मुख्य संरक्षक होता था। समाज और शहर में अन्य समूहों और वर्गों का स्थान शासक के साथ उनके सम्बन्धों से तय होता था। मध्यकालीन शहरों में शासक वर्ग के वर्चस्व वाली सामाजिक व्यवस्था में हरेक से अपेक्षा की जाती थी कि उसे समाज में अपना स्थान पता हो। उत्तर भारत में इस व्यवस्था को बनाए रखने का कार्य कोतवाल नामक राजकीय अधिकारी का होता था जो नगर में आंतरिक मामलों पर नजर रखता था और कानून–व्यवस्था बनाए रखता था।

राजनीतिक विकेन्द्रीकरण के प्रभाव सब जगह एक जैसे नहीं थे। कई स्थानों पर नए सिरे से आर्थिक गतिविधियाँ बढ़ीं कुछ अन्य स्थानों पर युद्ध लूट–पाट तथा राजनीतिक अनिश्चितता आर्थिक पतन में परिणत हुई। व्यापार तंत्रों में परिवर्तन शहरी केन्द्रों के इतिहास में परिलक्षित हुए। यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियों ने पहले मुगल काल में ही विभिन्न स्थानों पर आधार स्थापित कर लिए थे : पुर्तगालियों ने 1510 में पणजी में डचों ने 1605 में मछलीपट्नम में अंग्रेजों ने मद्रास में 1639 में तथा फ्रांसीसियों ने 1673 में पांडिचेरी आज का पुदुचेरी में। व्यापारिक गतिविधियों में विस्तार के साथ ही इन व्यापारिक केंद्रों के आस–पास नगर विकसित होने लगे। अठारहवीं शताब्दी के अंत तक स्थल–आधारित साम्राज्यों का स्थान शक्तिशाली जल–आधारित यूरोपीय साम्राज्यों ने ले लिया। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार वाणिज्यवाद तथा पूँजीवाद की शक्तियाँ अब समाज के स्वरूप को परिभाषित करने लगी थीं।

मध्य–अठारहवीं शताब्दी से परिवर्तन का एक नया चरण आरंभ हुआ। जब व्यापारिक गतिविधियाँ अन्य स्थानों पर केंद्रित होने लगीं पतनोन्मुख हो गए। 1757 में प्लासी के युद्ध के बाद जैसे–जैसे अंग्रेजों ने राजनीतिक नियंत्रण हासिल किया और इंग्लिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी का व्यापार फैला मद्रास कलकत्ता तथा बम्बई जैसे औपनिवेशिक बंदरगाह शहर तेजी से नयी आर्थिक राजधानियों के रूप में उभरे। ये औपनिवेशिक प्रशासन और सत्ता के केन्द्र भी बन गए। नए भवनों और संस्थानों का विकास हुआ तथा शहरी स्थानों को नए तरीकों से व्यवस्थित किया गया। नए रोजगार विकसित हुए और लोग इन औपनिवेशिक शहरों की ओर उमड़ने लगे। लगभग 1800 तक ये जनसंख्या के लिहाज से भारत के विशालतम शहर बन गए थे।

औपनिवेशिक शासन बेहिसाब आंकड़ों और जानकारियों के संग्रह पर आधारित था। अंग्रेजों ने अपने व्यावसायिक मामलों को चलाने के लिए व्यापारिक गतिविधियाँ का विस्तृत ब्यौरा रखा था। बढ़ते शहरों में जीवन की गति और दिशा पर नजर रखने के लिए वे नियमित रूप से सर्वेक्षण करते थे। सांख्यिकीय आँकड़े इकट्ठा करते थे और विभिन्न प्रकार की सरकारी रिपोर्ट प्रकाशित करते थे। प्रारंभिक वर्षों से ही औपनिवेशिक सरकार ने मानचित्र तैयार करने पर खास ध्यान दिया। सरकार का मानना था कि किसी जगह की बनावट और भूदृश्य को समझने के लिए नक्शे जरूरी होते हैं। इस जानकारी के सहारे वे इलाके पर ज्यादा बेहतर नियंत्रण कायम कर सकते थे। जब शहर बढ़ने लगे तो न केवल उनके विकास की योजना तैयार करने के लिए बल्कि व्यवसाय को विकसित करने और अपनी सत्ता मजबूत करने के लिए भी नक्शे बनाये जाने लगे। शहरों के नक्शों से हमें उस स्थान पर पहाड़ियों, नदियों व हरियाली का पता चलता है। ये सारी चीजें रक्षा सम्बन्धी उद्देश्यों के लिए योजना तैयार करने में बहुत काम आती हैं। इसके अलावा घाटों की जगह मकानों की सघनता और गुणवत्ता तथा सड़कों की स्थिति आदि से इलाके की व्यावसायिक संभावनाओं का पता लगाने और कराधन यटैक्स व्यवस्थाद्ध की रणनीति बनाने में मदद मिलती है।

उन्नीसवीं सदी के आखिर से अंग्रेजों ने वार्षिक नगर पालिका कर वसूली के जरिए शहरों के रखरखाव के वास्ते पैसा इकट्ठा करने की कोशिशें शुरू कर दी थीं। टकरावों से बचने के लिए उन्होंने कुछ जिम्मेदारियाँ निर्वाचित भारतीय प्रतिनिधियों को भी सौंपी हुई थीं। आंशिक लोक–प्रतिनिध्त्वि से लैस नगर निगम जैसे संस्थानों का उद्देश्य शहरों में जलापूर्ति निकासी सड़क निर्माण और स्वास्थ्य व्यवस्था जैसी अत्यावश्यक सेवाएँ उपलब्ध कराना था। दूसरी तरफ नगर निगमों की गतिविधियों से नए तरह के रिकॉर्ड्स पैदा हुए जिन्हें नगर पालिका रिकॉर्ड रूम में सँभाल कर रखा जाने लगा। शहरों के फैलाव पर नजर रखने के लिए

International Journal of Advances in Engineering and Management (IJAEM)
Volume 5, Issue 2 Feb. 2023, pp: 451-454 www.ijaem.net ISSN: 2395-5252

नियमित रूप से लोगों की गिनती की जाती थी। उन्नीसवीं सदी के मध्य तक विभिन्न क्षेत्रों में कई जगह स्थानीय स्तर पर जनगणना की जा चुकी थी। अखिल भारतीय जनगणना का पहला प्रयास 1872 में किया गया। इसके बाद 1881 से दशकीय हर 10 साल में होने वाली जनगणना एक नियमित व्यवस्थाबन गई। भारत में शहरीकरण का अध्ययन करने के लिए जनगणना से निकले आँकड़े एक बहुमूल्य स्रोत हैं। जब हम इन रिपोर्ट को देखते हैं तो ऐसा लगता है कि हमारे पास ऐतिहासिक परिवर्तन को मापने के लिए ठोस जानकारी उपलब्धि है। बीमारियों से होने वाली मौतों की सारणियों का अन्तहीन सिलसिला या उम्र लिंग जाति एवं व्यवसाय के अनुसार लोगों को गिनने की व्यवस्था से संख्याओं का एक विशाल भंडार मिलता है जिससे सटीकता का भ्रम पैदा हो जाता है। लेकिन इतिहासकारों ने पाया है कि ये आंकड़े भ्रामक भी हो सकते हैं। इन आंकड़ों का इस्तेमाल करने से पहले हमें इस बात को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि आंकड़े किसने इकट्ठा किए हैं और उन्हें क्यों तथा कैसे इकट्ठा किया गया था। हमें यह भी मालूम होना चाहिए कि किस चीज को मापा गया था और किस चीज को नहीं मापा गया था।

इतिहासकारों को जनगणना जैसे स्रोतों का भारी अहतियात से इस्तेमाल करना पड़ता है। उन्हें जनगणना के पीछे निहित संभावित पूर्वाग्रहों को ध्यान में रखते हुए इन संख्याओं की सावधानी से पड़ताल करनी चाहिए और यह समझना चाहिए कि ये संख्याएँ क्या नहीं बता रही हैं। मगर जनगणना और नगरपालिका जैसे संस्थानों के सर्वेक्षण मानचित्रों और रिकार्डों के सहारे औपनिवेशिक शहरों का पुराने शहरों के मुकाबले ज्यादा विस्तार से अध्ययन किया जा सकता है।

1800 के बाद हमारे देश में शहरीकरण की रफ्तार धीमी रही। पूरी उन्नीसवीं सदी और बीसवीं सदी के पहले दो दशकों तक देश की कुल आबादी में शहरी आबादी का हिस्सा बहुत मामूली और स्थिर रहा। 1900 से 1940 के बीच 40 सालों के दरमियान शहरी आबादी 10 प्रतिशत से बढ़ कर लगभग 13 प्रतिशत हो गई थी। अपरिवर्तनशीलता के नीचे विभिन्न क्षेत्रों में शहरी विकास के रुझानों में उल्लेखनीय उतार–चढ़ाव छिपे हुए हैं। छोटे कस्बों के पास आर्थिक रूप से विकसित होने के ज्यादा मौके नहीं थे। दूसरी तरफ कलकत्ता, बम्बई और मद्रास तेजी से फैले और जल्दी ही विशाल शहर बन गए।

नए व्यावसायिक एवं प्रशासनिक केंद्रों के रूप में इन तीन शहरों के पनपने के साथ–साथ कई दूसरे तत्कालीन शहर कमजोर भी पड़ते जा रहे थे। औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का केंद्र होने के नाते ये शहर भारतीय सूती कपड़े जैसे निर्यात उत्पादों के लिए संग्रह डिपो थे। मगर इंग्लैंड में हुई औद्योगिक क्रांति के बाद इस प्रवाह की दिशा बदल गई और इन शहरों में ब्रिटेन के कारखानों में बनी चीजें उतरने लगीं। भारत से तैयार माल की बजाय कच्चे माल का निर्यात होने लगा। इस आर्थिक गतिविधि का स्वरूप ऐसा था कि उसने औपनिवेशिक शहरों को देश के परंपरागत शहरों और कस्बों से बिलकुल अलग ला खड़ा किया।

1853 में रेलवे की शुरुआत हुई। इसने शहरों की कायापलट कर दी। आर्थिक गतिविधियों का केंद्र परंपरागत शहरों से दूर जाने लगा क्योंकि ये शहर पुराने मार्गों और नदियों के समीप थे। हरेक रेलवे स्टेशन कच्चे माल का संग्रह केंद्र और आयातित वस्तुओं का वितरण बिंदु बन गया। उदाहरण के लिए गंगा के किनारे स्थित मिर्जापुर दक्कन से कपास तथा सूती वस्तुओं के संग्रह का केंद्र था जो बम्बई तक जाने वाली रेलवे लाइन के अस्तित्व में आने के बाद अपनी पहचान खोने लगा था। रेलवे नेटवर्क के विस्तार के बाद रेलवे वर्कशॉप्स और रेलवे कालोनियों की भी स्थापना शुरू हो गई। जमालपुर वॉल्टेयर और बरेली जैसे रेलवे नगर अस्तित्व में आए।

नए शहर बंदरगाह किले और सेवाओं के केंद्र अठारहवीं सदी तक मद्रास, कलकत्ता और बम्बई महत्वपूर्ण बंदरगाह बन चुके थे। ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने कारखानों यानी वाणिज्यिक कार्यालय इन्हीं बस्तियों में बनाए और यूरोपीय कंपनियों के बीच प्रतिस्पधा ंके कारण सुरक्षा के उद्देश्य से इन बस्तियों की किलेबंदी कर दी। मद्रास में फोर्ट सेंट जॉर्ज कलकत्ता में फोर्ट विलियम और बम्बई में फोर्ट ये इलाके ब्रिटिश आबादी के रूप में जाने जाते थे। यूरोपीय व्यापारियों के साथ लेन–देन चलाने वाले भारतीय व्यापारी, कारीगर और कामगार इन किलों के बाहर अलग बस्तियों में रहते थे। यूरोपीयों और भारतीयों के लिए शुरू से ही अलग क्वार्टर बनाए गये थे। उस समय के लेखन में उन्हें व्हाइट टाउन गोरा शहर और ब्लैक टाउन काला शहर के नाम से उद्धृत किया जाता था। राजनीतिक सत्ता अंग्रेजों के हाथ में आ जाने के बाद यह नस्ली फर्क और भी तीखा हो गया।

उन्नीसवीं सदी के मध्य में रेलवे के फैलते नेटवर्क ने इन शहरों को शेष भारत से जोड़ दिया। नतीजा यह हुआ कि जहाँ से कच्चा माल और मजदूर आते थे ऐसे देहाती और दूर–दराज इलाक्फो भी इन बंदरगाह शहरों से गहरे तौर पर जुड़ने लगे। क्योंकि कच्चा माल निर्यात के लिए इन शहरों में आता था और सस्ते श्रम की कोई कमी नहीं थी इसलिए वहाँ कारखानें लगाना आसान था। 1850 के दशक के बाद भारतीय व्यापारियों और उद्यमियों ने बम्बई में सूती कपड़ा मिलें लगाईं। कलकत्ता के बाहरी इलाक्फो में यूरोपीयों के स्वामित्व वाली जूट मिलें खोली गईं।

1860–70 के दशकों से स्वच्छता के बारे में कड़े प्रशासकीय उपाय लागू किए गये और भारतीय शहरों में निर्माण गतिविधियों पर अंकुश लगाया गया। लगभग इसी समय भूमिगत पाइप आधरित जलापूर्ति निकासी और नाली व्यवस्था भी निर्मित की गई। इस प्रकार भारतीय शहरों को नियमित व नियंत्रित करने के लिए स्वच्छता निगरानी भी एक अहम तरीका बन गया।

पहला हिल स्टेशनछावनियों की तरह हिल स्टेशन यपर्वतीय सैरगाह भी औपनिवेशिक शहरी विकास का एक खास पहलू थी। हिल स्टेशनों की स्थापना और बसावट का संबंध् सबसे पहले ब्रिटिश सेना की जरूरतों से था। सिमला वर्तमान शिमला की स्थापना गुरखा युद्ध 1815–1816 के दौरान की गई। अंग्रेज–मराठा 1818 युद्ध के कारण अंग्रेजों की दिलचस्पी माउंट आबू में बनी जबकि दार्जीलिंग को 1835 में सिक्किम के राजाओं से छीना गया था। ये हिल स्टेशन फौजियों को ठहराने सरहद की चौकसी करने और दुश्मन पर हमला बोलने के लिए महत्वपूर्ण स्थान थे।

हिल स्टेशन ऐसे अंग्रेजों और यूरोपीयनों के लिए भी आदर्श स्थान थे जो अपने घर जैसी मिलती–जुलती बस्तियाँ बसाना चाहते थे। उनकी इमारतें यूरोपीय शैली की होती थीं। अलग–अलग मकानों के बाद एक–दूसरे से कटे विला और बागों के बीच में स्थित कॉटेज बनाए जाते थे। एंग्लिकन चर्च और शैक्षणिक संस्थान आंग्ल आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते थे। सामाजिक दावत चाय बैठक पिकनिक रात्रिभोज मेले रेस और रंगमंच जैसी घटनाओं के रूप में यूरोपीयों का सामाजिक जीवन भी एक खास किस्म का था। रेलवे के आने से ये पर्वतीय सैरगाहें बहुत तरह के लोगों की पहुँच में आ गईं। अब भारतीय भी वहाँ जाने लगे। उच्च और मध्यवर्गीय लोग महाराजा वकील और व्यापारी सैर–सपाटे के लिए इन स्थानों पर जाने लगे। वहाँ उन्हें शासक यूरोपीय अभिजन के निकट होने का संतोष मिलता था। हिल स्टेशन औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के लिए भी महत्वपूर्ण थे। पास के हुए इलाकों में चाय और कॉफ्फी बगानों की स्थापना से मैदानी इलाकों से बड़ी संख्या में मजदूर वहाँ आने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि अब हिल स्टेशन केवल यूरोपीय लोगों की ही सैरगाह नहीं रह गए थे।

नए शहरों में सामाजिक जीवनसाधारण भारतीय आबादी के लिए नए शहर दाँतों तले उँगली दबा लेने का अनुभव थे जहाँ जिंदगी हमेशा दौड़ती–भागती सी दिखाई देती थी। वहाँ चरम संपन्नता और गहन गरीबी दोनों के दर्शन एक साथ होते थे। घोड़ागाड़ी जैसे नए यातायात साधन और बाद में ट्रामों और बसों के आने से यह हुआ कि अब लोग शहर के केंद्र से दूर जाकर भी बस सकते थे। समय के साथ काम की जगह और रहने की जगह दोनों एक–दूसरे से अलग होते गए। घर से दफतर या फैक्ट्री जाना एक नए किस्म का अनुभव बन गया। यद्यपि अब पुराने शहरों में मौजूद सामंजस्य और वाकफियत का अहसास गायब था

International Journal of Advances in Engineering and Management (IJAEM)
Volume 5, Issue 2 Feb. 2023, pp: 451-454 www.ijaem.net ISSN: 2395-5252

लेकिन टाउन हॉल सार्वजनिक पार्क रंगशालाओं और बीसवीं सदी में सिनेमा हॉलों जैसे सार्वजनिक स्थानों के बनने से शहरों में लोगों को मिलने–जुलने की उत्तेजक नयी जगह और अवसर मिलने लगे थे। शहरों में नए सामाजिक समूह बने तथा लोगों की पुरानी पहचानें महत्वपूर्ण नहीं रहीं। तमाम वर्गों के लोग बड़े शहरों में आने लगे। क्लर्को शिक्षकों वकीलों डॉक्टरों इंजीनियरों अकाउंटेंट्स की माँग बढ़ती जा रही थी। नतीजा मध्यवर्ग बढ़ता गया। उनके पास स्वूल कॉलेज और लाइब्रेरी जैसे नए शिक्षा संस्थानों तक अच्छी पहुँच थी। शिक्षित होने के नाते वे समाज और सरकार के बारे में अख्ब़ारों पत्रिकाओं और सार्वजनिक सभाओं में अपनी राय व्यक्त कर सकते थे। बहस और चर्चा का एक नया सार्वजनिक दायरा पैदा हुआ। सामाजिक रीति–रिवाज कायदे–कानून और तौर–तरीकों पर सवाल उठने लगे।

वेलेजली ने 1803 में नगर–नियोजन की आवश्यकता पर एक प्रशासकीय आदेश जारी किया और इस विषय में कई कमेटियों का गठन किया। बहुत सारे बाजारों, घाटों, कब्रिस्तानों और चर्मशोधन इकाइयों को साफ किया गया या हटा दिया गया। इसके बाद जनस्वास्थ्य एक ऐसा विचार बन गया जिसकी शहरों की सफाई और नगर–नियोजन परियोजनाओं में बार–बार दुहाई दी जाने लगी। वेलेजली की विदाई के बाद नगर–नियोजन का काम सरकार की मदद से लॉटरी कमेटी य1817 ने जारी रखा। लॉटरी कमेटी का यह नाम इसलिए पड़ा क्योंकि नगर सुधार के लिए पैसे की व्यवस्था जनता के बीच लॉटरी बेचकर ही की जाती थी।

शुरुआत में ये इमारतें परंपरागत भारतीय इमारतों के मुकाबले अजीब सी दिखाई देती थीं। लेकिन धीरे–धीरे भारतीय भी यूरोपीय स्थापत्य शैली के आदि हो गए और उन्होंने इसे अपना लिया। दूसरी तरफ अंग्रेजों ने अपनी जरूरतों के मुताबिक कुछ भारतीय शैलियों को अपना लिया। इसकी एक मिसाल उन बंगलों को माना जा सकता है जिन्हें बम्बई और पूरे देश में सरकारी अफसरों के लिए बनाया जाता था। इनके लिए अंग्रेजी का ठनदहसवू शब्द बंगाल के 'बंगला' शब्द से निकला है जो एक परंपरागत फूस की बनी झोंपड़ी होती थी। अंग्रेजों ने उसे अपनी जरूरतों के हिसाब से बदल लिया था। औपनिवेशिक बंगला एक बड़ी जमीन पर बना होता था। उसमें रहने वालों को न केवल प्राइवेसी मिलती थी बल्कि उनके और भारतीय जगत के बीच फासला भी स्पष्ट हो जाता था। परंपरागत ढलवाँ छत और चारों तरफ बना बरामदा बंगले को ठंडा रखता था। बंगले के परिसर में घरेलू नौकरों के लिए अलग से क्वार्टर होते थे। सिविल लाइन्स में बने इस तरह के बंगले एक खालिस नस्ली गढ़ बन गए थे जिनमें शासक वर्ग भारतीयों के साथ रोजाना सामाजिक सम्बन्धों के बिना आत्मनिर्भर जीवन जी सकते थे।

इमारतें और स्थापत्य शैलियाँ स्थापत्य शैलियों से अपने समय के सौंदर्यात्मक आदर्शों और उनमें निहित विविधताओं का पता चलता है। लेकिन, जैसा कि हमने देखा, इमारतें उन लोगों की सोच और नजर के बारे में भी बताती हैं जो उन्हें बना रहे थे। इमारतों के जरिए सभी शासक अपनी ताकत का इजहार करना चाहते हैं। इस प्रकार एक खास व–क्त की स्थापत्य शैली को देखकर हम यह समझ सकते हैं कि उस समय सत्ता को किस तरह देखा जा रहा था और वह इमारतों और उनकी विशिष्टताओं दृ इर्ट–पत्थर, खम्भे और मेहराब, आसमान छूते गुम्बद या उभरी हुई छतें दृ के जरिए किस प्रकार अभिव्यक्त होती थी। स्थापत्य शैलियों से केवल प्रचलित रुचियों का ही पता नहीं चलता। वे उनको बदलती भी हैं। वे नयी शैलियों को लोकप्रियता प्रदान करती हैं और संस्कृति की रूपरेखा तय करती हैं।बहुत सारे भारतीय भी यूरोपीय स्थापत्य शैलियों को आधुनिकता व सभ्यता का प्रतीक मानते हुए उन्हें अपनाने लगे थे। लेकिन इस बारे में सबकी राय एक जैसी नहीं थी। बहुत सारे भारतीयों को यूरोपीय आदर्शो से आपत्ति थी और उन्होंने देशी शैलियों को बचाए रखने का प्रयास किया। बहुतों ने पश्चिम के कुछ ऐसे खास तत्वों को अपना लिया जो उन्हें आधुनिक दिखाई देते थे और उन्हें स्थानीय परंपराओं के तत्वों में समाहित कर दिया। उन्नीसवीं सदी के आखिर से हमें औपनिवेशिक आदर्शो से भिन्न क्षेत्रीय और राष्ट्रीय अभिरुचियों को परिभाषित करने के प्रयास दिखाई देते हैं। इस तरह सांस्कृतिक टकराव की वृहद प्रक्रियाओं के जरिए विभिन्न शैलियाँ बदलती और विकसित होती गईं। इसलिए स्थापत्य शैलियों को देखकर हम इस बात को भी समझ सकते हैं कि शाही और राष्ट्रीय, तथा राष्ट्रीय और क्षेत्रीयध्स्थानीय के बीच सांस्कृतिक टकराव और राजनीतिक खींचतान किस तरह शक्ल ले रही थी।

सारांश

उन्नीसवीं सदी आते–आते शहर में सरकारी दखलंदाजी और ज्यादा सख्त हो चुकी थी। वो जमाना लद चुका था जब नगर–नियोजन को सरकार और निवासियों, दोनों की साझा जिम्मेदारी माना जाता था। वित्तपोषण सहित नगर–नियोजन के सारे आयामों को सरकार ने अपने हाथों में ले लिया। इस आधार पर और ज्यादा तेजी से झुग्गियों को हटाया जाने लगा और दूसरे इलाकों की कीमत पर ब्रिटिश आबादी वाले हिस्सों को तेजी से विकसित किया जाने लगा। स्वास्थकर और अस्वास्थ्यकर के नए विभेद के सहारे व्हाइट और ब्लैक टाउन वाले नस्ली विभाजन को और बल मिला। नगर निगम में मौजूद भारतीय नुमाइंदों ने शहर के यूरोपीय आबादी वाले इलाकों के विकास पर जरूरत से ज्यादा ध्यान दिए जाने का विरोध् किया।

इन सरकारी नीतियों के विरुद्ध जनता के प्रतिरोध् ने भारतीयों के भीतर उपनिवेशवाद विरोधी और राष्ट्रवादी भावनाओं को बढ़ावा दिया। जैसे–जैसे ब्रिटिश साम्राज्य फैला, अंग्रेज कलकत्ता, बम्बई और मद्रास जैसे शहरों को शानदार शाही राजधानियों में तब्दील करने की कोशिश करने लगे। उनकी सोच से ऐसा लगता था मानो शहरों की भव्यता से ही शाही सत्ता की ताकत प्रतिबिंबित होती है। आधुनिक नगर–नियोजन में ऐसी हर चीज को शामिल किया गया जिसके प्रति अंग्रेज अपनेपन का दावा करते थे : तर्कसंगत क्रम–व्यवस्था, सटीक क्रियान्वयन, पश्चिमी सौंदर्यात्मक आदर्श। शहरों का साफ और व्यवस्थित, नियोजित और सुंदर होना जरूरी था।

REFERENCE BOOKS

[1]. Jayapalan N. (2005) History Of Education In India. Delhi.
[2]. Khan, Ghazanfar Ali. History of Islamic Education in India and Nadvat Ul-'Ulama (2020)
[3]. Kumar, Deepak (2003), "India", The Cambridge History of Science vol 4: Delhi.
[4]. Kumar, Deepak (1984), "Science in Higher Education: A Study in Victorian India", delhi
[5]. Minault, Gail. Women's Education & Muslim Social Reform in Colonial India (1999)
[6]. Mukerji, Shridhar Nath. History of education in India: modern period (1961)
[7]. Nurullah, Syed, and J. P. Naik. A Students' History of Education In India (1800-1961) .1982
[8]. Prabhu, Joseph (2006), "Educational Institutions and Philosophies, Kalkatta
[9]. Raman, S.A. (2006), "Women's Education", Encyclopedia of India ,delhi

[10]. Rao, Parimala V. "Modern education and the revolt of 1857 in India." Allahabad(2016)
[11]. Ali, Azra Asghar. "Educational development of Muslim women in colonial India ,1999 .
[12]. Arnold, David (2004), The New Cambridge History of India: Landon
[13]. Blackwell, Fritz (2004), India: A Global Studies Handbook. Cambridge
[14]. Chaudhary, Latika. "Determinants of primary schooling in British India ,Delhi , 2009.
[15]. Dharampal, The beautiful tree: Indigenous Indian education , New Delhi 1983.
[16]. Ellis, Catriona. (2009) : Reassessing the Historiography of Education in Colonial India.
[17]. Ghosh, Suresh Chandra. The History of Education in Modern India, 1757-2012. Kalkata 1995.
[18]. Hartog, Philip. (1939) Some aspects of Indian education past and present. Delhi.